

Notes
M.A-Political Science
Semester -4
Paper— Comparative Politics & Political Analysis

Important Questions

Unit-1

1. राजनीतिक संस्कृति को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रकार एवं विशेषताएं बताइए।

• राजनीतिक संस्कृति की परिभाषा (Definition of Political Culture):

राजनीतिक संस्कृति (Political Culture) से तात्पर्य उस प्रणाली से है, जिसमें समाज के लोगों की राजनीतिक दृष्टिकोण, विश्वास, मूल्यों, भावनाओं और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण एवं आचरण शामिल होते हैं। यह किसी देश की राजनीति को समझने का आधार प्रदान करती है।

प्रसिद्ध राजनीतिक वैज्ञानिक एल्मंड और वर्बा (Almond and Verba) के अनुसार:

"राजनीतिक संस्कृति से तात्पर्य व्यक्तियों के राजनीतिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं के प्रति व्यवहारिक अभिवृत्तियों और विश्वासों से है।"

यह संस्कृति नागरिकों के राजनीतिक व्यवहार, राजनीतिक सहभागिता, तथा राजनीतिक संस्थाओं के प्रति उनके दृष्टिकोण को निर्धारित करती है।

राजनीतिक संस्कृति के प्रकार (Types of Political Culture):

एल्मंड और वर्बा ने राजनीतिक संस्कृति को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया है:

(1) परंपरागत राजनीतिक संस्कृति (Parochial Political Culture):

इसमें लोग राजनीति में रुचि नहीं रखते। उन्हें न तो सरकार की प्रक्रिया की जानकारी होती है और न ही उनमें राजनीतिक भागीदारी होती है। यह संस्कृति उन समाजों में पाई जाती है जो पिछड़े या पारंपरिक होते हैं।

उदाहरण: आदिवासी समाज, ग्रामीण और अनपढ़ समुदाय।

(2) अधीनस्थ राजनीतिक संस्कृति (Subject Political Culture):

इसमें लोग सरकार और राजनीतिक संस्थाओं के बारे में जानते तो हैं, लेकिन उसमें सक्रिय भाग नहीं लेते।

वे केवल शासन को स्वीकार करते हैं, परंतु उसमें बदलाव लाने की इच्छा या प्रयास नहीं करते।

यह संस्कृति तानाशाही या नौकरशाही व्यवस्था वाले देशों में पाई जाती है।

उदाहरण: कुछ अधिनायकवादी या साम्यवादी देश।

(3) सहभागी राजनीतिक संस्कृति (Participant Political Culture): इसमें नागरिक राजनीतिक प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेते हैं। वे राजनीतिक मुद्दों पर जागरूक होते हैं और चुनाव, आंदोलन, पार्टी गतिविधियों आदि में भाग लेते हैं।

यह संस्कृति लोकतांत्रिक देशों में पाई जाती है।

उदाहरण: भारत, अमेरिका, ब्रिटेन जैसे लोकतांत्रिक देश।

(4) मिश्रित राजनीतिक संस्कृति (Mixed Political Culture):

यह एक ऐसा रूप है जिसमें उपर्युक्त तीनों प्रकार की संस्कृतियों के तत्व मौजूद होते हैं।

जैसे भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत संस्कृति, शहरी क्षेत्रों में सहभागी संस्कृति देखी जा सकती है।

राजनीतिक संस्कृति की विशेषताएँ (Characteristics of Political Culture):

- ▶ राजनीतिक दृष्टिकोण का प्रतिबिंब: यह समाज के सदस्यों के राजनीतिक दृष्टिकोण, मूल्यों और विश्वासों का प्रतिबिंब होती है।
- ▶ राजनीतिक सहभागिता का निर्धारक: यह नागरिकों की राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी को प्रभावित करती है।
- ▶ स्थायित्व और परिवर्तन दोनों का संकेत: राजनीतिक संस्कृति स्थायित्व प्रदान करती है, पर समय के साथ यह परिवर्तनशील भी होती है।
- ▶ इतिहास और परंपराओं से प्रभावित: यह संस्कृति उस देश की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, परंपराओं, और सांस्कृतिक धरोहर पर आधारित होती है।
- ▶ शिक्षा और संचार माध्यमों से प्रभावित: शिक्षा, मीडिया और राजनीतिक जागरूकता इस संस्कृति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- ▶ राजनीतिक समाजीकरण का परिणाम: यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित होती है, जिसे राजनीतिक समाजीकरण कहते हैं। सरकार और जनता के बीच संबंधों को प्रभावित करती है: यह सरकार पर जनता के विश्वास और उनके समर्थन को निर्धारित करती है।

निष्कर्ष (Conclusion):

राजनीतिक संस्कृति किसी भी राष्ट्र के राजनीतिक जीवन का आधार होती है। यह न केवल लोगों की राजनीतिक समझ और सहभागिता को प्रभावित करती है, बल्कि शासन प्रणाली की सफलता और लोकतंत्र की स्थिरता में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक स्वस्थ और सहभागी राजनीतिक संस्कृति ही एक सशक्त और उत्तरदायी लोकतंत्र की पहचान है।

2. राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा का समालोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए ।

राजनीतिक समाजीकरण (Political Socialization)— समाजशास्त्र और राजनीति शास्त्र के महत्वपूर्ण विषयों में से एक है। यह प्रक्रिया उस तरीके को दर्शाती है, जिसके द्वारा व्यक्ति या समूह अपने राजनीतिक दृष्टिकोण, मूल्य, विश्वास और व्यवहार को प्राप्त करते हैं। यह प्रक्रिया परिवार, स्कूल, मीडिया, धार्मिक संस्थाएं, और अन्य सामाजिक संस्थाओं के माध्यम से चलती है। राजनीतिक समाजीकरण का लक्ष्य यह होता है कि व्यक्ति समाज में अपने राजनीतिक कर्तव्यों और अधिकारों को समझे, और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को पहचानें।

राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा का समालोचनात्मक मूल्यांकन करने से पहले, हमें इस प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को समझना जरूरी है:

1. राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया:

राजनीतिक समाजीकरण एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, जो जीवन के विभिन्न चरणों में चलती रहती है। यह प्रक्रिया बच्चों से लेकर वृद्धों तक हर उम्र के लोगों को प्रभावित करती है। यह प्रक्रिया परिवार, मित्रों, स्कूल, मीडिया और अन्य सामाजिक संस्थाओं के माध्यम से संचालित होती है। परिवार का इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान होता है, क्योंकि यह बच्चों को पहले राजनीतिक मूल्यों और विचारों से परिचित कराता है। इसके बाद, स्कूल और शिक्षा संस्थाएं युवाओं को नागरिक कर्तव्यों और

अधिकारों के प्रति जागरूक करती हैं।

2. राजनीतिक सामाजिककरण के प्रमुख कारक:

परिवार:—राजनीतिक समाजीकरण की शुरुआत परिवार से होती है। यहां पर व्यक्ति के राजनीतिक दृष्टिकोण, मूल्यों और आस्थाओं का प्रारंभिक निर्माण होता है। उदाहरण स्वरूप, यदि परिवार में कोई विशेष राजनीतिक पार्टी का समर्थन किया जाता है, तो बच्चे उसी पार्टी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सकते हैं।

स्कूल:— शिक्षा संस्थाएं नागरिकता, लोकतंत्र, मानवाधिकारों और कर्तव्यों के बारे में शिक्षित करती हैं। यहां बच्चों को सरकारी नीतियों, संविधान और कानूनों के बारे में बताया जाता है।

मीडिया:—आजकल मीडिया का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया है। समाचार चैनल, सोशल मीडिया, और अन्य प्लेटफॉर्म पर दिखाए गए राजनीतिक विचार, नायक, और मुद्दे व्यक्ति के राजनीतिक दृष्टिकोण को प्रभावित करते हैं।

धार्मिक संस्थाएं और समुदाय:— धार्मिक विश्वास और समुदाय के दृष्टिकोण भी राजनीतिक समाजीकरण पर प्रभाव डालते हैं। धार्मिक विचारधाराएं और संस्कृति, एक व्यक्ति के राजनीतिक दृष्टिकोण को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

3. राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य:

राजनीतिक समाजीकरण का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को एक सक्रिय और समझदार सदस्य बनाना है। यह उद्देश्य केवल एक व्यक्ति को उसके अधिकारों और कर्तव्यों से अवगत कराना नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि वह व्यक्ति समाज में होने वाली राजनीतिक घटनाओं, निर्णयों, और प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले सके।

4. समालोचनात्मक मूल्यांकन:

हालांकि राजनीतिक समाजीकरण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, लेकिन इसके कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए।

विभिन्नता की अनदेखी:—राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में अक्सर एकतरफा दृष्टिकोण का प्रचलन होता है, विशेष रूप से परिवार और समाज द्वारा। यह एक व्यक्ति को केवल एक ही राजनीतिक विचारधारा से परिचित कराता है, जो बाद में उसकी सोच को संकीर्ण बना सकता है। यह एकतरफा दृष्टिकोण, समाज में विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं और विविधताओं के प्रति असहिष्णुता को जन्म दे सकता है।

मीडिया का पक्षपाती प्रभाव:— मीडिया में अक्सर राजनीतिक विचारधाराओं का पक्ष लिया जाता है, जो व्यक्ति के राजनीतिक दृष्टिकोण को प्रभावित करता है। सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव के कारण आजकल जानकारी को विकृत तरीके से प्रस्तुत किया जाता है, जो राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को भ्रमित और विभाजित कर सकता है।

राजनीतिक सामाजिककरण में असमानता:— राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में समाज के विभिन्न वर्गों, जैसे गरीब, अल्पसंख्यक, और कमजोर वर्गों को पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। इस कारण से, समाज के कुछ हिस्से अपनी राजनीतिक पहचान और अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हो पाते, जो सामाजिक असमानता को बढ़ाता है।

राजनीतिक समाजीकरण के परिणाम:— राजनीतिक समाजीकरण का परिणाम हमेशा सकारात्मक नहीं होता। कभी-कभी यह राजनीतिक कट्टरवाद, आक्रामकता और समाज में विघटन पैदा करने का कारण बन सकता है। विशेष रूप से, जब लोग अपनी पहचान को केवल एक राजनीतिक विचारधारा से जोड़ने लगते हैं, तो यह समाज में ध्रुवीकरण और संघर्ष को बढ़ावा दे सकता है।

5. निष्कर्ष

राजनीतिक समाजीकरण समाज के लिए अत्यंत आवश्यक प्रक्रिया है, लेकिन इसके प्रभाव को समग्र रूप से समझना चाहिए। यह एक प्रक्रिया है जो समाज के प्रत्येक सदस्य को राजनीतिक दृष्टिकोण, जिम्मेदारियों और अधिकारों के प्रति जागरूक करती है। हालांकि, इसे इस रूप में परिभाषित और संरचित किया जाना चाहिए कि यह समाज के सभी वर्गों और विचारधाराओं के बीच संतुलन बनाए रखे, ताकि समाज में असहमति और विविधता के बावजूद लोकतांत्रिक मूल्यों की सुरक्षा हो सके।

समाज में राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य केवल राजनीति के प्रति जागरूकता ही नहीं, बल्कि एक लोकतांत्रिक और विविधतापूर्ण समाज में सहिष्णुता, समानता, और न्याय की भावना को विकसित करना भी है।

3. राजनीतिक विकास तथा राजनीतिक आधुनिकीकरण पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर — राजनीतिक विकास और राजनीतिक आधुनिकीकरण दोनों ही महत्वपूर्ण अवधारणाएँ हैं जो राजनीति और समाज के विकास को समझने के लिए जरूरी हैं। इन दोनों अवधारणाओं का अध्ययन करने से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि किसी समाज या देश में राजनीतिक व्यवस्था, संस्थाएँ, और नागरिक की राजनीतिक समझ किस प्रकार समय के साथ बदलती हैं।

राजनीतिक विकास (Political Development):

राजनीतिक विकास एक लंबी और निरंतर प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत किसी समाज या राष्ट्र की राजनीतिक संस्थाएँ, प्रक्रियाएँ, और मूल्य विकसित होते हैं। इसे सामान्यतः उन परिवर्तन और सुधारों के रूप में देखा जाता है, जो एक लोकतांत्रिक और आधुनिक राज्य के निर्माण में सहायक होते हैं। राजनीतिक विकास का उद्देश्य समाज में बेहतर शासन, नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा, न्याय, और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देना होता है।

राजनीतिक विकास की विशेषताएँ:

1. संविधान और कानूनी व्यवस्था का सुदृढ़ होना: — राजनीतिक विकास का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि संविधान और कानून की भावना को लागू किया जाए, ताकि नागरिकों के अधिकारों की रक्षा हो सके। इसमें नियमों और कानूनों के प्रति नागरिकों की निष्ठा और विश्वास का निर्माण किया जाता है।
2. लोकतांत्रिक संस्थाओं का निर्माण: — राजनीतिक विकास में लोकतंत्र के सिद्धांतों का पालन और लोकतांत्रिक संस्थाओं का सृजन महत्वपूर्ण होता है। जैसे कि स्वतंत्र चुनाव, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, प्रेस की स्वतंत्रता आदि।
3. नागरिक समाज का सशक्तिकरण: — जब राजनीतिक विकास होता है, तो नागरिकों को अपनी राजनीतिक और सामाजिक भूमिका को समझने का अवसर मिलता है। वे राजनीतिक निर्णयों में भाग लेने के लिए प्रेरित होते हैं और समाज में सक्रिय भूमिका निभाने लगते हैं।
4. राजनीतिक समावेशन: — राजनीतिक विकास के तहत, समाज के विभिन्न वर्गों, जातियों, धर्मों, और भाषाओं के बीच समान अधिकारों और अवसरों का वितरण सुनिश्चित किया जाता है। यह समाज में समानता और समरसता को बढ़ावा देता है।
5. शासन की पारदर्शिता: — विकासशील देशों में यह देखा जाता है कि राजनीतिक विकास के साथ-साथ शासन की पारदर्शिता और जवाबदेही की भावना भी बढ़ती है।

राजनीतिक विकास के उदाहरण:

भारत का संविधान 1950 में लागू होने के बाद, राजनीतिक विकास की प्रक्रिया को एक नया आयाम मिला, जिससे एक लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का निर्माण हुआ।

दक्षिण अफ्रीका का रंगभेद नीति का अंत और 1994 में नेल्सन मंडेला का राष्ट्रपति बनना भी राजनीतिक विकास का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

राजनीतिक आधुनिकीकरण (Political Modernization):

राजनीतिक आधुनिकीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके तहत पारंपरिक और पुरानी राजनीतिक संरचनाओं और प्रक्रियाओं को नया रूप और आधुनिक विचारधारा मिलती है। इसका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि राजनीतिक व्यवस्था और राज्य संस्थाएँ नए सामाजिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक परिवर्तनों के अनुरूप ढलें। राजनीतिक आधुनिकीकरण में सरकार के तौर-तरीकों, नीतियों, और प्रक्रियाओं को आधुनिक बनाने की प्रक्रिया होती है, ताकि वे एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और विकासशील समाज की जरूरतों को पूरा कर सकें।

राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएँ:

1. लोकतंत्र और तंत्र का सशक्तिकरण: —राजनीतिक आधुनिकीकरण में लोकतंत्र के सिद्धांतों को मजबूती से लागू किया जाता है। यह न केवल चुनाव प्रक्रिया को सुदृढ़ करता है, बल्कि राजनीतिक दलों, संस्थाओं, और नागरिक समाज को एक सशक्त भूमिका प्रदान करता है।
2. नई संस्थाओं और संरचनाओं का निर्माण: —इसमें राजनीतिक संस्थाओं का आधुनिकीकरण, जैसे कि आधुनिक विधानसभा, चुनाव आयोग, और न्यायपालिका की स्थापना शामिल है। यह संस्थाएँ पारंपरिक संस्थाओं से कहीं अधिक लोकतांत्रिक, पारदर्शी और जवाबदेह होती हैं।
3. प्रौद्योगिकी का उपयोग: —राजनीतिक आधुनिकीकरण के साथ-साथ प्रौद्योगिकी का भी उपयोग बढ़ता है, जिससे राजनीतिक निर्णयों को अधिक प्रभावी और पारदर्शी बनाया जाता है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से शासन की पारदर्शिता और नागरिकों तक सेवाओं की पहुंच में वृद्धि होती है।
4. समाज में समानता का प्रोत्साहन:— राजनीतिक आधुनिकीकरण में किसी भी समाज के विभिन्न समूहों को समान अधिकारों और अवसरों का प्रवर्तन किया जाता है। यह महिलाओं, अल्पसंख्यकों, और गरीब वर्गों के लिए राजनीतिक और सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देता है।
5. राजनीतिक और सामाजिक सुरक्षा:— इसमें नागरिकों को उनके अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी दी जाती है, ताकि वे एक स्वतंत्र और सुरक्षित समाज में जीवन जी सकें।

राजनीतिक आधुनिकीकरण के उदाहरण:

यूरोपीय देशों का औद्योगिक क्रांति के बाद हुआ राजनीतिक आधुनिकीकरण एक प्रमुख उदाहरण है, जिसमें शासन की प्रक्रियाएँ और राजनीतिक तंत्र अधिक लोकतांत्रिक और व्यवस्थित हो गए।

भारत में 1990 के दशक में आर्थिक सुधारों के साथ राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को भी बढ़ावा मिला।

राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण के बीच अंतर:

1. सिद्धांत: —राजनीतिक विकास एक सामान्य रूप से विकास की प्रक्रिया को व्यक्त करता है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण का उद्देश्य केवल एक विशेष दिशा में, यानी आधुनिकता की ओर बदलाव है।
2. परिपेक्ष्य:— राजनीतिक विकास एक व्यापक प्रक्रिया है जो समाज के हर क्षेत्र को प्रभावित करती है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण केवल राजनीतिक तंत्र, संस्थाओं और प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करता है।

3. लक्ष्य: —राजनीतिक विकास का लक्ष्य समाज में समग्र सुधार लाना है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण का लक्ष्य केवल शासन के तंत्र और राजनीतिक प्रक्रियाओं को आधुनिक बनाना है।

निष्कर्ष:

राजनीतिक विकास और राजनीतिक आधुनिकीकरण दोनों ही एक-दूसरे से संबंधित हैं, लेकिन इनकी प्रक्रियाएँ और लक्ष्य भिन्न हैं। राजनीतिक विकास का उद्देश्य समाज की समग्र भलाई के लिए सुधार लाना है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण मुख्य रूप से सरकार की संरचनाओं और नीतियों को आधुनिक बनाना है। दोनों प्रक्रियाएँ लोकतांत्रिक समाज की सुदृढ़ता और स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

Unit-2

4. आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक दलों की भूमिका का परीक्षण कीजिए।

आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक दलों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी है। राजनीतिक दल समाज के विभिन्न वर्गों, विचारधाराओं और रुचियों का प्रतिनिधित्व करते हैं और सरकार के गठन से लेकर नीति निर्माण तक में अपनी प्रभावी भूमिका निभाते हैं। इनकी भूमिका को समझने के लिए हम इसे विभिन्न दृष्टिकोणों से देख सकते हैं:

1. लोकतंत्र में प्रतिनिधित्व और सहभागिता:

राजनीतिक दल लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में नागरिकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक दल के पास एक विशिष्ट विचारधारा और नीति होती है जो समाज के विभिन्न वर्गों के हितों को ध्यान में रखते हुए बनाई जाती है। ये दल चुनावों में भाग लेकर जनता के समर्थन से सरकार बनाने की प्रक्रिया में हिस्सा लेते हैं।

विचारधारात्मक प्रतिनिधित्व: राजनीतिक दल समाज के विभिन्न हिस्सों के लिए विभिन्न विचारधाराओं और दृष्टिकोणों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उदाहरण के लिए, एक दल समाजवादी नीतियों का पक्षधर हो सकता है, तो दूसरा दल उदारवादी नीतियों का।

लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सहभागिता: राजनीतिक दल चुनावों के माध्यम से नागरिकों को राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी का अवसर प्रदान करते हैं। यह उन्हें अपने विचारों को सार्वजनिक मंच पर प्रस्तुत करने का मौका देता है।

2. नीति निर्माण में भूमिका:

राजनीतिक दल नीति निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब एक दल सरकार में होता है, तो उसकी विचारधारा और नीतियों के आधार पर वह देश की आंतरिक और बाह्य नीतियों का निर्धारण करता है।

संविधान और कानून निर्माण: सरकार द्वारा बनाए गए कानून और नीतियाँ अक्सर एक राजनीतिक दल के सिद्धांतों और एजेंडा पर आधारित होती हैं।

सामाजिक और आर्थिक सुधार: राजनीतिक दल समय-समय पर समाज में सुधार लाने के लिए नई नीतियाँ और योजनाएं प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम और विकास के क्षेत्र में सुधार के लिए दल अपनी नीतियाँ प्रस्तुत करते हैं।

3. गठबंधन और विपक्षी भूमिका:

राजनीतिक दलों की एक महत्वपूर्ण भूमिका विपक्षी दलों के रूप में भी होती है। विपक्षी दल सरकार के कार्यों और नीतियों की समीक्षा करते हैं, और यदि सरकार की नीतियाँ जनहित में नहीं होतीं, तो वे उनका विरोध करते हैं। यह लोकतंत्र के संतुलन को

बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

गठबंधन सरकारें: कई बार छोटे-छोटे दलों के साथ गठबंधन करके एक बड़ी पार्टी सरकार बनाती है। इस प्रकार की सरकारें राजनीतिक दलों के बीच सामंजस्य, समझौते और समान विचारधारा की आवश्यकता को जन्म देती हैं।

विपक्ष की निगरानी: विपक्षी दल सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों पर आलोचना करते हैं, जो शासन में पारदर्शिता और जवाबदेही को बनाए रखता है।

4. राजनीतिक दल और जनता के बीच संपर्क:

राजनीतिक दल समाज में नागरिकों और सरकार के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं। वे जनता से सीधे संवाद स्थापित करते हैं, उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं को समझते हैं, और इन्हें राजनीतिक एजेंडे में शामिल करने का प्रयास करते हैं।

सामाजिक आंदोलनों में भागीदारी: राजनीतिक दल विभिन्न सामाजिक आंदोलनों का हिस्सा बनकर जनता के अधिकारों की रक्षा करते हैं। उदाहरण के लिए, महिला अधिकारों, दलित अधिकारों और पर्यावरण सुरक्षा के लिए किए गए आंदोलन।

जनता के मुद्दों का समाधान: राजनीतिक दल विभिन्न मंचों पर जनता के मुद्दों को उठाते हैं, जैसे बेरोज़गारी, गरीबी, स्वास्थ्य, शिक्षा, और अन्य सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए योजनाएं बनाना।

5. पार्टी अनुशासन और आंतरिक लोकतंत्र:

राजनीतिक दलों के भीतर भी अनुशासन और आंतरिक लोकतंत्र की आवश्यकता होती है। अच्छे राजनीतिक दल वे होते हैं जिनके भीतर कार्यकर्ता और नेताओं के बीच सामंजस्य होता है और जहां निर्णय प्रक्रिया पारदर्शी होती है। हालांकि, कई बार राजनीतिक दलों में आंतरिक संघर्ष और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएँ भी उत्पन्न होती हैं, जो लोकतंत्र के लिए हानिकारक हो सकती हैं।

6. संविधान और धर्मनिरपेक्षता की रक्षा:

राजनीतिक दलों का यह भी दायित्व है कि वे संविधान की रक्षा करें और धर्मनिरपेक्षता की भावना को बनाए रखें। विशेष रूप से लोकतंत्र में यह जरूरी है कि कोई भी दल धार्मिक, जातीय या भाषाई आधार पर समाज में भेदभाव न फैलाए।

निष्कर्ष:

आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक दल समाज की विविधता को एकजुट करने, लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को संचालित करने, और नीति निर्माण में सहयोग करने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। यह दल लोकतंत्र की धारा को प्रबल बनाए रखते हैं, सरकार के कार्यों की निगरानी करते हैं, और समाज की जरूरतों के अनुसार नीति निर्माण की दिशा तय करते हैं। हालांकि, दलों के भीतर की आंतरिक राजनीति और अवसरवादिता भी कभी-कभी लोकतंत्र के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न कर सकती है, लेकिन इसके बावजूद इनकी भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण और अनिवार्य है।

5. दबाव समूह को परिभाषित कीजिए। आधुनिक प्रजातांत्रिक राज्यों में दबाव समूह की भूमिका का विवेचन कीजिए।

उत्तर— दबाव समूह की परिभाषा:

दबाव समूह (Pressure Groups) वे संगठित या असंगठित समूह होते हैं जो सरकार या नीति-निर्माताओं पर अपने हितों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए प्रभाव डालते हैं। ये सीधे सत्ता में भाग नहीं लेते, बल्कि अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार के उपायों से प्रशासन और विधायिका को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

परिभाषा:

प्रो. एम.जी. स्मिथ के अनुसार –

> "दबाव समूह ऐसे संगठन होते हैं जो राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं, परंतु वे स्वयं चुनाव नहीं लड़ते।"

दबाव समूह की विशेषताएँ:

1. ये औपचारिक या अनौपचारिक दोनों हो सकते हैं।
2. इनका उद्देश्य विशेष वर्ग या समूह के हितों की रक्षा करना होता है।
3. ये सरकार पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालने का प्रयास करते हैं, न कि स्वयं सरकार बनाने का।
4. इनका आधार आर्थिक, धार्मिक, जातीय, व्यावसायिक या सांस्कृतिक हो सकता है।

प्रमुख प्रकार के दबाव समूह:

1. व्यावसायिक समूह – जैसे व्यापारी संघ, उद्योग मंडल (FICCI, ASSOCHAM)
2. कर्मचारी/श्रमिक संगठन – जैसे ट्रेड यूनियन, बैंक कर्मचारी संघ
3. कृषक संगठन – जैसे भारतीय किसान यूनियन
4. धार्मिक संगठन – जैसे विश्व हिन्दू परिषद, जमीयत-उलमा-ए-हिंद
5. जातीय एवं क्षेत्रीय संगठन – जैसे लिंगायत संघ, मराठा क्रांति मोर्चा
6. सिविल सोसाइटी एवं एनजीओ – जैसे ग्रीनपीस, एमनेस्टी इंटरनेशनल

आधुनिक प्रजातांत्रिक राज्यों में दबाव समूह की भूमिका:

1. नीति-निर्माण में योगदान:

दबाव समूह सरकार को अपने सदस्यों के हितों से अवगत कराकर नीतियों को प्रभावित करते हैं। उदाहरण: व्यापारिक संघ कर नीति में बदलाव की मांग करते हैं।

2. जनमत निर्माण:

ये समूह अपने विषय से संबंधित जानकारी प्रसार कर आम जनता की राय तैयार करते हैं। जैसे पर्यावरण से संबंधित समूह जलवायु परिवर्तन पर जनजागरूकता फैलाते हैं।

3. लोकतंत्र को बल प्रदान करना:

दबाव समूह सरकार के कामकाज पर नजर रखते हैं और अनियमितताओं को उजागर करते हैं, जिससे लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व सुनिश्चित होता है।

4. सरकार और जनता के बीच सेतु:

ये समूह जनता की मांगों को सरकार तक पहुँचाते हैं और सरकार की योजनाओं की जानकारी जनता को देते हैं।

5. विकल्प प्रदान करना: जब राजनीतिक दल विफल हो जाते हैं, तब दबाव समूह विभिन्न नीतियों के लिए विकल्प प्रस्तुत करते हैं और समाधान सुझाते हैं।

दबाव समूहों की **आलोचना**:

1. ये कभी-कभी सिर्फ विशेष वर्ग के हित की चिंता करते हैं, जिससे सार्वजनिक हित की उपेक्षा होती है।
2. इनमें पारदर्शिता का अभाव हो सकता है।
3. कई बार ये हिंसात्मक या अनुचित तरीके अपनाते हैं।
4. धन और सत्ता का अनुचित प्रयोग कर सकते हैं।

निष्कर्ष:

आधुनिक प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं में दबाव समूहों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये सत्ता और जनता के बीच संवाद स्थापित कर नीति-निर्माण को अधिक सहभागी, उत्तरदायी और समावेशी बनाते हैं। यद्यपि इनके कार्यों में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करना आवश्यक है, ताकि ये लोकतंत्र को सशक्त करने के बजाय दुर्बल न करें।

6. राजनीतिक प्रक्रिया में प्रतिनिधित्व की विभिन्न विधियों की विवेचना कीजिए।

उत्तर- परिचय:

राजनीतिक प्रक्रिया में प्रतिनिधित्व (Representation) का अर्थ है – जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन व्यवस्था को संचालित करना। लोकतांत्रिक प्रणाली में यह एक अनिवार्य तत्त्व है, जिससे जनता के विचार, इच्छाएँ और हित विधायिका व शासन तक पहुँचते हैं।

प्रतिनिधित्व की विभिन्न विधियाँ विकसित की गई हैं ताकि हर वर्ग, समुदाय या मतदाता की आवाज उचित रूप से शासन प्रणाली में सम्मिलित हो सके।

प्रतिनिधित्व की प्रमुख विधियाँ:

1. प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व प्रणाली (Direct Representation):

इस प्रणाली में प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से एक प्रतिनिधि चुना जाता है। यह प्रणाली मुख्यतः बहुमत प्रणाली (Majority System) पर आधारित होती है।

(i) सरल बहुमत प्रणाली (First Past the Post – FPTP):

प्रत्येक मतदाता केवल एक उम्मीदवार को वोट देता है।

जो उम्मीदवार सबसे अधिक मत प्राप्त करता है, वही निर्वाचित होता है।

उदाहरण: भारत, ब्रिटेन, अमेरिका में उपयोग।

लाभ:

सरल और स्पष्ट परिणाम।

स्थायी और मजबूत सरकार बनती है।

हानि: अल्पमत में रहकर भी उम्मीदवार जीत सकता है।

अल्पसंख्यक वर्गों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता।

2. आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली (Proportional Representation – PR):

इस प्रणाली में राजनीतिक दलों को उनकी प्राप्त मतों के अनुपात में सीटें दी जाती हैं। इससे सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व मिलता है।

(i) सूची प्रणाली (List System):

दलों की सूची प्रस्तुत की जाती है।

मतदाता दल को वोट देते हैं, न कि उम्मीदवार को।

प्राप्त मतों के अनुसार दलों को सीटें मिलती हैं।

उदाहरण: इज़राइल, नीदरलैंड।

(ii) सिंगल ट्रांसफरेबल वोट प्रणाली (STV):

मतदाता कई उम्मीदवारों को वरीयता क्रम में वोट देते हैं।

यदि कोई उम्मीदवार आवश्यक कोटा पार कर लेता है, तो शेष वोट अन्य उम्मीदवारों में स्थानांतरित हो जाते हैं।

उदाहरण: आयरलैंड, भारत में राज्यसभा और राष्ट्रपति चुनाव।

लाभ:

मतों की बर्बादी नहीं होती।

अल्पसंख्यकों और छोटे दलों को प्रतिनिधित्व मिलता है।

हानि: जटिल प्रणाली।

गठबंधन सरकार बनने की संभावना अधिक।

3. मिश्रित प्रणाली (Mixed System):

इसमें प्रत्यक्ष बहुमत प्रणाली और आनुपातिक प्रणाली दोनों के तत्वों का समावेश होता है। कुछ सीटें सीधे चुनाव से और कुछ पार्टी के मत प्रतिशत से तय होती हैं।

उदाहरण: जर्मनी, जापान।

लाभ: प्रतिनिधित्व का संतुलन।

स्थिरता और समावेशन का मेल।

4. आरक्षित प्रतिनिधित्व (Reserved Representation):

कुछ समाजों में ऐतिहासिक अन्याय या सामाजिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए विशेष वर्गों के लिए सीटें आरक्षित की जाती हैं।

उदाहरण: भारत में अनुसूचित जाति, जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण।

लाभ: वंचित वर्गों का राजनीतिक सशक्तिकरण।

हानि: कभी-कभी योग्यता की उपेक्षा का आरोप।

5. महिलाओं और अन्य वर्गों का प्रतिनिधित्व:

कई देशों में महिलाओं के लिए आरक्षण या कोटा प्रणाली लागू की गई है, जैसे – भारत में पंचायत स्तर पर 33% आरक्षण।

इसके अलावा विकलांग, अल्पसंख्यक और प्रवासी समुदायों को भी विशेष प्रतिनिधित्व दिया जाता है।

निष्कर्ष:

प्रतिनिधित्व लोकतंत्र की आत्मा है। विभिन्न प्रतिनिधित्व विधियाँ समाज की विविधता, राजनीतिक स्थिरता और न्याय सुनिश्चित करने के लिए प्रयुक्त होती हैं। कोई भी प्रणाली पूर्ण नहीं है, परंतु समाज की आवश्यकताओं और राजनीतिक पृष्ठभूमि के अनुसार सर्वश्रेष्ठ प्रणाली का चयन आवश्यक है।

भारत जैसे विविधता भरे लोकतंत्र में बहुमत प्रणाली, आरक्षित प्रतिनिधित्व, और अनुपातिक प्रणाली (राज्यसभा में) का मिला-जुला स्वरूप अपनाया गया है, जिससे सभी वर्गों को समुचित भागीदारी मिल सके।

Unit-3

7. राजनीतिक अभिजन सिद्धांत पर निबंध लिखिए ।

भूमिका

राजनीति, मानव समाज की वह संरचना है जो सत्ता, निर्णय और नीति-निर्माण की प्रक्रिया को संचालित करती है। यद्यपि लोकतंत्र में यह माना जाता है कि सत्ता जनता के हाथों में होती है, परंतु व्यवहारिक रूप में यह देखा गया है कि समाज में कुछ विशेष व्यक्ति या समूह सत्ता और संसाधनों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेते हैं। इन व्यक्तियों या समूहों को "राजनीतिक अभिजन" कहा जाता है।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत इसी विचार को प्रतिपादित करता है कि समाज में सत्ता, निर्णय और नीति निर्माण की शक्ति एक सीमित अभिजात वर्ग के हाथों में केंद्रित होती है, चाहे वह समाज किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के अधीन क्यों न हो।

यह सिद्धांत लोकतंत्र के आदर्शों से अलग एक यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है और बताता है कि किस प्रकार सत्ता का संकेंद्रण समाज के एक विशिष्ट वर्ग तक सीमित हो जाता है।

अभिजन की परिभाषा और प्रकार

"अभिजन" शब्द लैटिन के "eligere" शब्द से बना है, जिसका अर्थ है – चयनित करना। अभिजन वे लोग होते हैं जो किसी भी कारणवश – शक्ति, संपत्ति, योग्यता, ज्ञान, संगठन या पद के कारण समाज में प्रभावशाली स्थिति रखते हैं और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदार होते हैं।

अभिजन के प्रमुख प्रकार—

1. राजनीतिक अभिजन – नेता, मंत्री, सांसद, विधायक आदि।
2. आर्थिक अभिजन – बड़े उद्योगपति, पूंजीपति, व्यवसायिक समूह।
3. सांस्कृतिक अभिजन – साहित्यकार, कलाकार, धार्मिक नेता, बुद्धिजीवी।
4. प्रशासनिक अभिजन – वरिष्ठ नौकरशाह, न्यायपालिका, पुलिस तंत्र।
5. संचार अभिजन – मीडिया घराने, बड़े पत्रकार, सोशल मीडिया प्रभावशाली।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत मुख्यतः इन सभी प्रकारों में से राजनीतिक और आर्थिक अभिजन की भूमिका पर बल देता है क्योंकि इन्हीं के पास नीति निर्धारण और संसाधनों का नियंत्रण होता है।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत के प्रवर्तक

1. विल्फ्रेडो पैरेटो (Vilfredo Pareto)

इटली के समाजशास्त्री और अर्थशास्त्री पैरेटो ने "अभिजन संचलन" (Circulation of Elites) का सिद्धांत दिया। उन्होंने कहा कि समाज में सदा दो वर्ग होते हैं –

अभिजन (Elite) – जो शासन करते हैं

गैर-अभिजन (Non-Elite) – जो शासित होते हैं

पैरेटो के अनुसार अभिजन वर्ग स्थायी नहीं होता, वह समय के साथ बदलता रहता है। उन्होंने यह भी कहा कि अभिजन दो प्रकार के होते हैं:

सिंह जैसे अभिजन (Lion type) – जो कठोर और शक्तिशाली होते हैं

लोमड़ी जैसे अभिजन (Fox type) – जो चतुर, चालाक और रणनीतिक होते हैं

2. गैटानो मोस्का (Gaetano Mosca)

मोस्का ने कहा कि समाज सदा दो वर्गों में विभाजित रहता है –

शासक वर्ग (Ruling Class)

शासित वर्ग (Ruled Class)

शासक वर्ग संख्या में कम होता है, लेकिन वह संगठित होता है, जबकि शासित वर्ग संख्या में अधिक होते हुए भी असंगठित रहता है। इसीलिए शासक वर्ग पर नियंत्रण पाना कठिन होता है।

3. रॉबर्ट मिशेल्ल्स (Robert Michels)

उन्होंने "अभिजनों का लौह नियम" (Iron Law of Oligarchy) प्रस्तुत किया। उनका तर्क था कि कोई भी संगठन चाहे कितना भी लोकतांत्रिक क्यों न हो, उसमें निर्णय लेने की शक्ति कुछ नेताओं के पास ही सिमट जाती है। समय के साथ ये नेता संगठन को नियंत्रित करने लगते हैं और अंततः संगठन अल्पतंत्रीय हो जाता है।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत की मुख्य विशेषताएँ

1. सत्ता का केंद्रीकरण – समाज में सत्ता और संसाधन कुछ सीमित लोगों के हाथों में होते हैं।
2. लोकतंत्र की सीमाएँ – लोकतंत्र की व्यावहारिक प्रक्रिया में भी निर्णय लेने का कार्य कुछ ही लोग करते हैं।
3. अभिजन संचलन – पुराने अभिजन धीरे-धीरे हटते हैं और उनकी जगह नए अभिजन आते हैं।
4. अभिजनों की आत्म-संरक्षण प्रवृत्ति – अभिजन वर्ग अपने विशेषाधिकारों की रक्षा के लिए नियमों, संस्थाओं और संसाधनों का अपने पक्ष में प्रयोग करता है।
5. बहुसंख्यक जनता का हाशिये पर होना – सामान्य जन लोकतंत्र में मतदान तो करते हैं, परंतु नीति-निर्धारण में उनकी प्रत्यक्ष भूमिका सीमित होती है।

लोकतंत्र और अभिजन सिद्धांत: एक व्यवहारिक विश्लेषण

लोकतंत्र में यह माना जाता है कि 'जनता के द्वारा, जनता के लिए, और जनता की सरकार' होती है। परंतु वास्तविकता यह है कि लोकतंत्र में भी सत्ता कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों के पास केंद्रित हो जाती है।

उदाहरण के रूप में –

भारत में – राजनीतिक वंशवाद, कॉर्पोरेट लॉबिंग, मीडिया का केंद्रीकरण।

अमेरिका में – लॉबिंग समूहों और कॉर्पोरेट हितधारकों का नीतियों पर प्रभाव।

यूरोप में – यूरोपीय संघ की नीतियों में नौकरशाही और विशिष्ट वर्गों की भूमिका।

इससे स्पष्ट है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में भी एक 'अभिजात वर्ग' प्रभावी रूप से शासन करता है।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत की उपयोगिता और प्रासंगिकता:

1. राजनीतिक यथार्थ को उजागर करना – यह सिद्धांत आदर्शवादी लोकतंत्र की वास्तविकता को सामने लाता है।
2. नीतिगत विश्लेषण में सहायक – इससे यह समझने में मदद मिलती है कि नीतियाँ कैसे और किनके प्रभाव में बनती हैं।
3. जन-जागरूकता की प्रेरणा – यह सिद्धांत जनता को सचेत करता है कि वे सत्ता पर निगरानी रखें और भागीदारी बढ़ाएं।
4. राजनीतिक सुधारों की प्रेरणा – यह विचारधारा बताती है कि सत्ता के विकेंद्रीकरण की कितनी आवश्यकता है।

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत की आलोचना

1. लोकतंत्र के आदर्शों के विरुद्ध : यह सिद्धांत जनसत्ता, जनसहभागिता और समानता जैसे लोकतांत्रिक आदर्शों को नकारता है।
2. जनता की भूमिका को कमतर आँकना : यह माना जाता है कि जनता केवल एक निष्क्रिय समूह है, जबकि आज की जागरूक जनता सोशल मीडिया, विरोध आंदोलनों और जन-संचार के माध्यम से अपनी सक्रिय भूमिका निभा रही है।
3. परिवर्तन की संभावनाओं को नकारना:

अभिजन सिद्धांत यह मानकर चलता है कि सत्ता हमेशा कुछ लोगों के पास ही रहेगी, जबकि इतिहास ने दिखाया है कि बड़े

जनांदोलनों ने सत्ता संरचना को पूरी तरह बदल दिया है (जैसे – फ्रांसीसी क्रांति, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, अरब स्प्रिंग आदि)।

4. सार्वजनिक संस्थानों की अनदेखी:

यह सिद्धांत न्यायपालिका, चुनाव आयोग, सूचना आयोग आदि जैसी संस्थाओं की भूमिका को महत्व नहीं देता जो सत्ता के दुरुपयोग को रोकने का कार्य करती हैं।

भारत में राजनीतिक अभिजन सिद्धांत की स्थिति:

भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक अभिजनों की भूमिका स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है:

राजनीतिक वंशवाद – गांधी-नेहरू परिवार, यादव परिवार, ठाकरे परिवार, पवार परिवार आदि।

कार्पोरेट प्रभाव – चुनावी चंदा, नीति निर्धारण पर औद्योगिक घरानों का प्रभाव।

नौकरशाही और न्यायपालिका – निर्णय प्रक्रिया में चुनिंदा अधिकारियों की भूमिका।

मीडिया का धुवीकरण – न्यूज़ चैनल और अखबार बड़े उद्योगपतियों के स्वामित्व में।

हालांकि इसके साथ-साथ सिविल सोसाइटी, सोशल मीडिया, न्यायपालिका और जनता के बढ़ते हस्तक्षेप से यह भी स्पष्ट है कि सत्ता पर एकाधिकार को चुनौती दी जा रही है।

निष्कर्ष—

राजनीतिक अभिजन सिद्धांत एक यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जो लोकतंत्र की व्यवहारिक चुनौतियों की ओर संकेत करता है। यह सिद्धांत इस बात को रेखांकित करता है कि समाज में चाहे जो भी राजनीतिक व्यवस्था हो, सत्ता का संकेंद्रण कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के पास ही होता है।

हालांकि इस सिद्धांत की आलोचना भी की जाती है क्योंकि यह जनभागीदारी, समानता और लोकतांत्रिक संस्थाओं की अनदेखी करता है, लेकिन इसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है, विशेषकर तब जब लोकतंत्र में पारदर्शिता, जवाबदेही और जन-भागीदारी की मांग उठ रही है।

अतः, यह आवश्यक है कि लोकतंत्र को वास्तविक रूप से जनतंत्र बनाने हेतु जनता, संस्थाएं और नीतिगत प्रक्रिया में अधिक समावेशिता और सहभागिता सुनिश्चित की जाए। केवल तभी सत्ता का विकेंद्रीकरण संभव होगा और राजनीतिक अभिजन का प्रभुत्व सीमित किया जा सकेगा।

प्रश्न 8: नौकरशाही की परिभाषा दीजिए, इसके प्रकारों तथा भूमिका की विवेचना कीजिए।

उत्तर –

भूमिका

राज्य की संरचना में नौकरशाही (Bureaucracy) का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में जहाँ राजनीतिक नेतृत्व नीति निर्माण करता है, वहीं इन नीतियों के क्रियान्वयन और प्रशासनिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने का कार्य नौकरशाही करती है। यह प्रशासनिक ढांचा शासन व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी के समान होता है।

नौकरशाही का विकास आधुनिक राज्य की आवश्यकताओं के साथ हुआ है, और आज यह शासन, विकास, न्याय, सुरक्षा और कल्याण के प्रत्येक क्षेत्र में अत्यंत निर्णायक भूमिका निभाती है।

नौकरशाही की परिभाषा

नौकरशाही एक प्रशासनिक प्रणाली है जिसमें कार्यों को औपचारिक नियमों, श्रेणीबद्ध पदानुक्रम (hierarchy), विशेषज्ञता और निष्पक्षता के आधार पर किया जाता है। यह एक संगठित तंत्र होता है जो सरकार के आदेशों और नीतियों को जमीनी स्तर पर लागू करता है।

प्रमुख विद्वानों द्वारा परिभाषाएँ:

1. मैक्स वेबर (Max Weber):

“नौकरशाही एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था है जिसमें कार्य विभाजन, नियम-आधारित संचालन, पदानुक्रम, तकनीकी योग्यता और निष्पक्षता जैसे लक्षण होते हैं।”

2. एफ. एम. मार्क्स (F.M. Marx):

“नौकरशाही वह संस्था है जो सरकार के निर्णयों और नीतियों को निष्पक्षता एवं तकनीकी दक्षता के साथ कार्यान्वित करती है।”

नौकरशाही के प्रकार

नौकरशाही को विभिन्न आधारों पर विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है:

1. संरचना के आधार पर:

(i) श्रेणीबद्ध नौकरशाही (Hierarchical Bureaucracy):

इसमें सत्ता और उत्तरदायित्व ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होते हैं।

प्रत्येक अधिकारी अपने उच्च अधिकारी को रिपोर्ट करता है।

उदाहरण: भारतीय प्रशासनिक सेवा की संरचना।

(ii) कार्यात्मक नौकरशाही (Functional Bureaucracy):

कार्यों का विभाजन विषय आधारित होता है (जैसे – स्वास्थ्य, शिक्षा, राजस्व)।

विशेषज्ञता पर बल होता है।

2. व्यवहार के आधार पर:

(i) आदर्श नौकरशाही (Ideal Bureaucracy):

मैक्स वेबर द्वारा प्रतिपादित।

इसमें नियमों के अनुसार कार्य, तकनीकी दक्षता, और निष्पक्षता की अपेक्षा होती है।

(ii) यथार्थ नौकरशाही (Real Bureaucracy):

वास्तविक जीवन में नौकरशाही की कार्यशैली, जिसमें कई बार निजी स्वार्थ, राजनीति, भ्रष्टाचार आदि का प्रभाव होता है।

3. कार्य के आधार पर:

(i) प्रशासनिक नौकरशाही (Administrative Bureaucracy):

नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन दोनों में सक्रिय।

उच्च स्तर के अधिकारी शामिल होते हैं।

(ii) कार्यान्वयनकारी नौकरशाही (Executive Bureaucracy):

केवल नीतियों को लागू करने का कार्य करती है।

जैसे – तहसीलदार, ब्लॉक विकास अधिकारी आदि।

4. संवैधानिक स्थिति के आधार पर:

(i) स्थायी नौकरशाही (Permanent Bureaucracy):

जो चयन के आधार पर नियुक्त होती है (जैसे – IAS, IPS)।

सरकार के बदलने पर भी इनकी सेवा जारी रहती है।

(ii) अस्थायी नौकरशाही (Temporary/Political Bureaucracy):

जो राजनीतिक नियुक्तियों के रूप में कार्य करती है (जैसे – सलाहकार, नीति विशेषज्ञ)।

सरकार बदलने पर बदल जाती है।

नौकरशाही की भूमिका की विवेचना

नौकरशाही की भूमिका आधुनिक राज्य में कई स्तरों पर महत्वपूर्ण है:

1. नीति निर्माण में सहयोग:

नौकरशाही सरकार को तथ्य, आंकड़े, रिपोर्ट और तकनीकी सलाह प्रदान करती है।

मंत्रीगण इन सूचनाओं के आधार पर नीतियाँ बनाते हैं।

उदाहरण: शिक्षा नीति, जल नीति, स्वास्थ्य नीति आदि के निर्माण में विशेषज्ञ नौकरशाहों की भूमिका।

2. नीतियों का क्रियान्वयन:

नौकरशाही का मुख्य कार्य सरकार की नीतियों को प्रभावी रूप से धरातल पर लागू करना है।

योजनाओं का संचालन, बजट का उपयोग, और निगरानी इसका हिस्सा हैं।

3. शासन की निरंतरता:

सरकारें बदलती रहती हैं, लेकिन नौकरशाही स्थायी होती है।

यह प्रशासन में निरंतरता और स्थायित्व सुनिश्चित करती है।

उदाहरण: भारत में लोकसेवकों का प्रशासनिक ढांचा सरकार के बदलाव के बावजूद चलता रहता है।

4. विधि और नियमों का पालन :

नौकरशाही संविधान, कानूनों और नियमों के अनुसार कार्य करती है।

इससे शासन प्रणाली में अनुशासन और निष्पक्षता बनी रहती है।

5. लोक कल्याणकारी कार्यों में सहयोग:

सरकारी योजनाओं को जनता तक पहुँचाने, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण आदि क्षेत्रों में नौकरशाही की भूमिका केंद्रीय होती है।

उदाहरण: मनरेगा, आयुष्मान भारत, जन धन योजना आदि में अधिकारियों की भूमिका।

6. आपदा प्रबंधन और राहत कार्य:

प्राकृतिक आपदा, महामारी या किसी संकट की स्थिति में नौकरशाही आपात प्रतिक्रिया तंत्र के रूप में कार्य करती है।

उदाहरण: कोविड-19 के दौरान जिला कलेक्टरों और प्रशासनिक अमले की सक्रिय भूमिका।

7. न्यायिक एवं विधायी सहयोग:

न्यायपालिका और विधायिका को सूचनाएँ, रिपोर्ट, प्रशासनिक समर्थन प्रदान करना।

जाँच आयोगों, संसदीय समितियों में नौकरशाहों की सहायता।

8. विदेशी नीति एवं अंतरराष्ट्रीय सहयोग:

विदेश मंत्रालय, वाणिज्य मंत्रालय आदि के अंतर्गत अधिकारी अंतरराष्ट्रीय मामलों में तकनीकी विशेषज्ञता देते हैं।

9. भ्रष्टाचार नियंत्रण एवं जवाबदेही:

प्रशासनिक नियमों के माध्यम से पारदर्शिता बनाए रखने का दायित्व।

ई-गवर्नेंस और डिजिटलीकरण द्वारा जवाबदेही को बढ़ावा।

नौकरशाही की चुनौतियाँ:

1. लाल फीताशाही (Red Tapisism): अत्यधिक औपचारिकता और धीमी प्रक्रिया।
2. भ्रष्टाचार: कुछ अधिकारियों द्वारा पद का दुरुपयोग।
3. राजनीतिक हस्तक्षेप: कार्यों में राजनीतिक दबाव से स्वतंत्रता बाधित होती है।
4. जनता से दूरी: अधिकारियों का व्यवहार कई बार असंवेदनशील और शुष्क होता है।
5. सुधारों में अनिच्छा: नौकरशाही अक्सर परिवर्तन को लेकर निष्क्रिय होती है।

सुधार के उपाय

1. प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशें लागू करना।
2. ई-गवर्नेंस और डिजिटलीकरण को बढ़ावा देना।
3. जनता के प्रति उत्तरदायी बनाना (Citizen Centric Approach)।
4. समयबद्ध सेवाएँ और प्रदर्शन मूल्यांकन।
5. राजनीतिक और प्रशासनिक वर्गों में संतुलन।

निष्कर्ष

नौकरशाही आधुनिक शासन प्रणाली का एक अपरिहार्य अंग है। यह न केवल शासन को सुचारू रूप से संचालित करती है, बल्कि लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थिरता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करती है।

हालाँकि इसमें कुछ खामियाँ हैं जैसे – लाल फीताशाही, भ्रष्टाचार, निष्क्रियता – लेकिन यह भी स्पष्ट है कि इन समस्याओं को दूर कर एक उत्तरदायी, पारदर्शी और सक्षम नौकरशाही से ही सुशासन की कल्पना की जा सकती है।

अतः आज आवश्यकता है एक ऐसे "उत्तरदायी, जनमुखी और सशक्त नौकरशाही" की जो न केवल शासन का माध्यम हो, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और विकास की प्रेरक शक्ति भी बने।

प्रश्न 9: विधि (कानून) के शासन की अवधारणा की विवेचना कीजिए।

उत्तर –

◆ भूमिका

"विधि का शासन" (Rule of Law) आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारभूत अवधारणा है। यह सिद्धांत इस विचार पर आधारित है कि राज्य की संपूर्ण गतिविधियाँ विधि के अधीन होंगी और न कोई व्यक्ति, न सरकार, और न ही कोई संस्था कानून से ऊपर होगी। विधि के शासन का उद्देश्य है – सत्ता का दुरुपयोग रोकना, नागरिकों को समान अधिकार देना, और न्यायपूर्ण व्यवस्था सुनिश्चित करना।

यह अवधारणा लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में न्याय, समानता, स्वतंत्रता और जवाबदेही जैसे मूल्यों को मजबूती प्रदान करती है।

◆ विधि के शासन की परिभाषा

"विधि का शासन" (Rule of Law) का सामान्य अर्थ है कि राज्य की संपूर्ण कार्यप्रणाली और प्रशासन विधि द्वारा नियंत्रित हो। यह शासन प्रणाली मनमानी पर नहीं, बल्कि विधिक नियमों और संविधान पर आधारित होती है।

विद्वानों द्वारा परिभाषाएँ:

- ◆ ए. वी. डाइसी (A.V. Dicey):

"Rule of Law means the absolute supremacy or predominance of regular law as opposed to the influence of arbitrary power."

(अर्थात् विधि का शासन वह सिद्धांत है जिसमें विधि सर्वोच्च होती है और किसी भी प्रकार की मनमानी को अस्वीकार किया

जाता है।)

◆ डाइसी के विधि शासन सिद्धांत के तीन प्रमुख अंग

ए. वी. डाइसी ने इंग्लैंड की संवैधानिक व्यवस्था का अध्ययन करते हुए विधि शासन के तीन प्रमुख सिद्धांत प्रतिपादित किए:

1. विधि की सर्वोच्चता (Supremacy of Law)–

किसी भी नागरिक को तब तक दोषी नहीं माना जा सकता जब तक कि उसने विधि का उल्लंघन न किया हो।

किसी को मनमाने तरीके से गिरफ्तार या दंडित नहीं किया जा सकता।

सरकारी अधिकारियों की कार्यप्रणाली भी विधि द्वारा निर्धारित होती है।

2. विधि के समक्ष समानता (Equality Before Law)–

सभी नागरिक, चाहे वह सामान्य हो या उच्च पदस्थ, विधि के समक्ष समान होते हैं।

किसी को विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होता।

राज्याध्यक्ष से लेकर सामान्य व्यक्ति तक सभी कानून के अधीन होते हैं।

3. संविधान की आत्मा न्यायालयीय निर्णयों में निहित (Predominance of Legal Spirit)–

इंग्लैंड में संविधान एकल दस्तावेज के रूप में नहीं है, बल्कि न्यायालयों के निर्णयों के माध्यम से विकसित हुआ है।

अतः विधि का शासन केवल लिखित कानून पर नहीं, बल्कि न्यायिक व्याख्याओं पर भी आधारित है।

◆ विधि के शासन की विशेषताएँ

1. सत्ता पर नियंत्रण – कानून सत्ता को सीमित और उत्तरदायी बनाता है।
2. न्याय का समान अवसर – सभी को कानून के समक्ष समान न्याय मिलता है।
3. स्वतंत्र न्यायपालिका – निष्पक्ष न्याय सुनिश्चित करने के लिए न्यायपालिका स्वतंत्र होती है।
4. संवैधानिक वरीयता – संविधान विधियों का सर्वोच्च स्रोत होता है।
5. नागरिक अधिकारों की रक्षा – विधि नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करती है।
6. नियम आधारित प्रशासन – प्रशासनिक कार्य भी विधियों द्वारा नियंत्रित होते हैं।

◆ विधि के शासन की आवश्यकता

मनमानी रोकने हेतु – यदि सत्ता पूर्ण स्वतंत्र हो जाए तो वह दमनकारी हो सकती है।

नागरिक स्वतंत्रता की सुरक्षा हेतु

लोकतंत्र की मजबूती हेतु

अधिकारों की व्याख्या हेतु न्यायिक व्यवस्था आवश्यक

प्रशासनिक जवाबदेही सुनिश्चित करने हेतु

◆ भारत में विधि के शासन की स्थिति

भारतीय संविधान में विधि के शासन के तत्व:

1. प्रस्तावना में – न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुता का उल्लेख।
2. अनुच्छेद 14 – कानून के समक्ष समानता और समान संरक्षण की गारंटी।
3. अनुच्छेद 21 – जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण।
4. अनुच्छेद 32, 226 – मौलिक अधिकारों की रक्षा हेतु न्यायालय की शक्तियाँ।
5. संविधान का सर्वोच्चता सिद्धांत – संसद एवं कार्यपालिका संविधान द्वारा नियंत्रित हैं।

न्यायपालिका द्वारा पुष्ट उदाहरण:

- ◆ केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973):

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि संविधान की मूल संरचना को संसद नहीं बदल सकती।

विधि का शासन संविधान की मूल संरचना का अंग है।

- ◆ मेनका गांधी केस (1978):

"प्रक्रिया स्थापित होनी चाहिए विधि द्वारा" को "न्यायसंगत, उचित और युक्तिसंगत प्रक्रिया" से जोड़ा गया।

विधि के शासन की व्यापक व्याख्या।

- ◆ ए.डी.एम. जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला (हबीबुर्हमान केस) (1976):

यह निर्णय आलोचना का विषय बना क्योंकि कोर्ट ने यह माना कि आपातकाल में व्यक्ति का मौलिक अधिकार निलंबित हो सकता है।

परंतु आगे चलकर यह निर्णय पलटा गया और विधि के शासन को सर्वोच्च माना गया।

◆ विधि के शासन की व्यावहारिक चुनौतियाँ (भारत के परिप्रेक्ष्य में)

1. राजनीतिक हस्तक्षेप:

कार्यपालिका और विधायिका कभी-कभी न्यायिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करती है।

2. लंबित मुकदमे और धीमी न्यायिक प्रक्रिया:

न्याय में विलंब विधि के शासन को प्रभावित करता है।

3. भ्रष्टाचार:

न्यायपालिका और पुलिस व्यवस्था में भ्रष्टाचार विधि के शासन को कमजोर करता है।

4. सामाजिक असमानता:

गरीब और अशिक्षित नागरिकों के लिए न्याय प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

5. कानूनों की जटिलता: आम नागरिकों को कानून समझने और उपयोग करने में कठिनाई होती है।

◆ विधि के शासन को प्रभावी बनाने के उपाय

1. न्यायपालिका को और अधिक स्वतंत्र एवं सशक्त बनाना।
2. ई-गवर्नेंस और डिजिटलीकरण द्वारा पारदर्शिता लाना।
3. कानूनों को सरल और जनोन्मुखी बनाना।
4. विधिक सहायता (Legal Aid) को सुलभ बनाना।
5. लोक प्रशासन और पुलिस को विधिक प्रशिक्षण देना।
6. जन-जागरूकता कार्यक्रम चलाना, ताकि नागरिक अपने अधिकारों से परिचित हो सकें।

◆ विधि का शासन बनाम मनमानी शासन (Arbitrary Rule)

विधि का शासन	मनमानी शासन
विधि और संविधान के अनुसार शासन।	इच्छानुसार शासन
सभी के लिए समान नियम	व्यक्तिनिष्ठ निर्णय
न्यायिक नियंत्रण की व्यवस्था	न्याय का अभाव
मौलिक अधिकारों की सुरक्षा	अधिकारों का हनन
पारदर्शिता और जवाबदेही	उत्तरदायित्वहीन शासन

निष्कर्ष: "विधि का शासन" केवल एक सिद्धांत नहीं, बल्कि लोकतंत्र की आत्मा है। यह न केवल नागरिकों को मनमानी और अत्याचार से सुरक्षा प्रदान करता है, बल्कि शासन प्रणाली में न्याय, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना विकसित करता है।

भारतीय संविधान विधि के शासन को सर्वोच्च मानता है और इसे न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका – तीनों अंगों पर लागू करता है। हालांकि व्यवहार में अनेक चुनौतियाँ हैं, लेकिन निरंतर प्रयास और सुधारों के माध्यम से इसे और अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। इस प्रकार, "विधि का शासन" लोकतंत्र का वास्तविक प्रहरी है और किसी भी प्रगतिशील राष्ट्र की पहचान भी।

Unit-4

प्रश्न 10: शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

उत्तर –

◆ भूमिका

राज्य की शासन व्यवस्था तीन मुख्य अंगों – विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका – पर आधारित होती है। इन तीनों अंगों की शक्तियाँ, कार्य और अधिकार यदि एक ही संस्था या व्यक्ति के हाथों में केंद्रित हो जाएँ, तो इससे तानाशाही और सत्ता के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है।

इसी से बचने के लिए "शक्ति के पृथक्करण" (Separation of Powers) का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया।

यह सिद्धांत शासन को व्यवस्थित और संतुलित बनाने का प्रयास करता है ताकि सत्ता के विभिन्न अंग एक-दूसरे पर नियंत्रण रखें और जनतंत्र का संरक्षण हो सके।

◆ शक्ति के पृथक्करण का अर्थ

शक्ति के पृथक्करण का अभिप्राय है – शासन की विधायी (legislative), कार्यकारी (executive) और न्यायिक (judicial) शक्तियों को अलग-अलग संस्थाओं या निकायों के बीच इस प्रकार बाँटना कि वे एक-दूसरे के कार्यों में हस्तक्षेप न करें।

इसका उद्देश्य सत्ता का संतुलन बनाए रखना और तानाशाही से बचाव करना है।

◆ शक्ति के पृथक्करण का ऐतिहासिक विकास

1. अरस्तू (Aristotle):

अरस्तू ने सबसे पहले शासन की तीन प्रकार की शक्तियों – विचार-विमर्श, आदेश और न्याय – की चर्चा की।

यद्यपि उन्होंने पृथक्करण का स्पष्ट सिद्धांत नहीं दिया, परंतु शासन के वर्गीकरण की नींव रखी।

2. जॉन लॉक (John Locke):

इंग्लैंड के दार्शनिक जॉन लॉक ने "Two Treatises of Government" में विधायी, कार्यकारी और संघीय शक्तियों का पृथक्करण प्रस्तुत किया।

उनके अनुसार, सत्ता का केंद्रीकरण नागरिक स्वतंत्रता के लिए खतरा है।

3. मॉन्टेस्क्यू (Montesquieu):

"The Spirit of Laws" (1748) नामक प्रसिद्ध पुस्तक में मॉन्टेस्क्यू ने आधुनिक "Separation of Powers" सिद्धांत को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया।

उनका कहना था –

"Power should be a check to power." (अर्थात् सत्ता को सत्ता से नियंत्रित किया जाना चाहिए)

◆ मॉन्टेस्क्यू का सिद्धांत: प्रमुख तत्व

1. तीनों शक्तियों का पृथक्करण अनिवार्य है।

2. कोई भी संस्था दूसरी संस्था की शक्ति ग्रहण नहीं कर सकती।

3. तीनों अंग स्वतंत्र रूप से कार्य करें।
4. पारस्परिक नियंत्रण एवं संतुलन बना रहे।

◆ शक्ति के पृथक्करण का उद्देश्य

तानाशाही रोकना

नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा

शासन में पारदर्शिता और संतुलन लाना

न्यायपालिका की निष्पक्षता सुनिश्चित करना

कार्य कुशलता और विशेषज्ञता बढ़ाना

◆ शक्ति के पृथक्करण का व्यवहारिक रूप

1. अमेरिका में (कठोर पृथक्करण):

अमेरिका के संविधान में शक्ति का स्पष्ट पृथक्करण किया गया है।

राष्ट्रपति कार्यपालिका का प्रमुख होता है, लेकिन वह संसद का सदस्य नहीं होता।

कांग्रेस (विधायिका), राष्ट्रपति (कार्यपालिका) और सुप्रीम कोर्ट (न्यायपालिका) अलग-अलग कार्य करते हैं।

तीनों संस्थाएँ Check and Balance के सिद्धांत के अंतर्गत एक-दूसरे को नियंत्रित भी करती हैं।

2. ब्रिटेन में (लचीला पृथक्करण):

ब्रिटेन में संसद सर्वोच्च है। कार्यपालिका और विधायिका में घनिष्ठ संबंध होता है।

प्रधानमंत्री और मंत्रीगण संसद के सदस्य होते हैं।

न्यायपालिका भी संसद द्वारा बनाए गए कानूनों के अधीन कार्य करती है।

3. भारत में (मिश्रित व्यवस्था):

भारत में शक्ति का पूर्ण पृथक्करण नहीं है, बल्कि कार्यात्मक विभाजन और संतुलन है।

संविधान में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच स्वतंत्रता तो है, लेकिन समन्वय भी है।

अनुच्छेद 50 में न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक रखने की बात कही गई है।

सुप्रीम कोर्ट ने अपने कई निर्णयों में इस सिद्धांत को संविधान की मूल संरचना (basic structure) का भाग माना है।

◆ भारत में शक्ति के पृथक्करण का व्यवहारिक स्वरूप

संस्था	मुख्य भूमिका	स्वतंत्रता के उदाहरण	
विधायिका	कानून बनाना	संसद/विधानसभा कानून बनाती है	

| कार्यपालिका | नीतियों को लागू करना | कार्यपालिका प्रशासनिक आदेश जारी करती है |
| न्यायपालिका | कानून की व्याख्या और न्याय देना | न्यायपालिका स्वतंत्र न्याय सुनिश्चित करती है |

✓ उदाहरण:

केशवानंद भारती केस (1973): सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि संविधान की मूल संरचना में शक्ति का पृथक्करण निहित है।

इंदिरा गांधी केस (1975): न्यायपालिका को स्वतंत्र रखने पर जोर दिया गया।

◆ शक्ति के पृथक्करण की आलोचना

1. आर्थिक और प्रशासनिक दृष्टिकोण से अव्यवहारिक

पूर्ण पृथक्करण से समन्वय की कमी होती है, जिससे निर्णय प्रक्रिया धीमी हो सकती है।

आज के जटिल शासन में सहयोग आवश्यक है।

2. लोकतंत्र में उत्तरदायित्व की आवश्यकता-

लोकतांत्रिक प्रणाली में कार्यपालिका को विधायिका के प्रति उत्तरदायी बनाना ज़रूरी है।

शक्ति का कठोर पृथक्करण उत्तरदायित्व को कम कर सकता है।

3. कार्य विभाजन हमेशा संभव नहीं-

कुछ कार्य overlapped होते हैं — जैसे, अध्यादेश जारी करना (कार्यपालिका द्वारा कानून बनाना)।

न्यायपालिका भी कानून की व्याख्या करते हुए कभी-कभी “न्यायिक सक्रियता” के तहत नीति निर्माण करने लगती है।

4. न्यायिक हस्तक्षेप (Judicial Overreach)

कभी-कभी न्यायपालिका प्रशासनिक कार्यों में अत्यधिक हस्तक्षेप करती है जो शक्ति संतुलन को प्रभावित कर सकता है।

उदाहरण: कोल स्कैम, 2G घोटाले में सुप्रीम कोर्ट की सक्रियता।

5. राजनीतिक दबाव

शक्तियों के पृथक्करण के बावजूद व्यवहार में राजनीतिक हस्तक्षेप देखा जाता है, विशेषकर नियुक्तियों में।

◆ समकालीन संदर्भ में शक्ति पृथक्करण की प्रासंगिकता:

वर्तमान समय में शक्ति का पृथक्करण एक आदर्श लक्ष्य की तरह है। यह प्रशासन को पारदर्शी, न्यायपूर्ण और संतुलित बनाने की दिशा में मार्गदर्शन करता है।

✓ सकारात्मक प्रभाव:

नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा होती है।

संस्थानों के दायरे तय होते हैं।

तानाशाही प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रहता है।

सरकार की जवाबदेही बढ़ती है।

संविधान की मर्यादा बनी रहती है।

◆ निष्कर्ष –

"शक्ति का पृथक्करण" आधुनिक संवैधानिक व्यवस्थाओं की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। यह सिद्धांत शासन को न्यायसंगत, उत्तरदायी और संतुलित बनाने में सहायक होता है। यद्यपि व्यवहार में इसका कठोर रूप अव्यवहारिक हो सकता है, परंतु इसका लचीला और समन्वित रूप लोकतंत्र की रक्षा और प्रशासनिक कुशलता दोनों को सुनिश्चित करता है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक और विविधतापूर्ण देश में यह सिद्धांत "संविधान की मूल संरचना" के रूप में कार्य करता है, जिससे संस्थानों की स्वतंत्रता बनी रहती है और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा होती है।

अतः शक्ति के पृथक्करण का लक्ष्य केवल सत्ता को अलग करना नहीं, बल्कि सत्ता का संतुलन, सहयोग और पारदर्शिता स्थापित करना है – जो किसी भी लोकतंत्र की आत्मा है।

प्रश्न 11: न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review) पर विस्तृत लेख लिखिए।

उत्तर— प्रस्तावना

भारत एक संवैधानिक लोकतंत्र है, जहाँ संविधान सर्वोच्च है और समस्त सरकारी क्रियाएँ संविधान के अनुरूप होनी चाहिए। न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review) वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से न्यायपालिका यह सुनिश्चित करती है कि विधायिका और कार्यपालिका द्वारा पारित किए गए कानून और आदेश संविधान के अनुरूप हैं या नहीं। यदि वे संविधान की भावना के विरुद्ध पाए जाते हैं, तो न्यायपालिका उन्हें अवैध (Unconstitutional) घोषित कर सकती है।

न्यायिक पुनरावलोकन लोकतंत्र की रक्षा की एक सशक्त विधि है, जो नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा और सत्ता के संतुलन के लिए आवश्यक है।

◆ न्यायिक पुनरावलोकन की परिभाषा

न्यायिक पुनरावलोकन वह शक्ति है जिसके अंतर्गत उच्च न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायालय यह परीक्षण करते हैं कि कोई विधि, नीति, आदेश अथवा कार्य संविधान के अनुरूप है या नहीं। यदि नहीं है, तो न्यायालय उसे निरस्त कर सकता है।

✓ संविधान विशेषज्ञ के विचार:

के.सी. व्हीयर के अनुसार – "Judicial review is the power of courts to pronounce upon the constitutionality of legislative and executive acts."

◆ भारत में न्यायिक पुनरावलोकन की संवैधानिक आधार

भारतीय संविधान में स्पष्ट रूप से न्यायिक पुनरावलोकन का उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन इसकी शक्ति निम्नलिखित अनुच्छेदों में निहित है:

अनुच्छेद

संबंधित अधिकार

- अनुच्छेद 13 – ऐसा कोई भी कानून जो मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है, शून्य होगा। |
- अनुच्छेद 32 – सुप्रीम कोर्ट को मौलिक अधिकारों के उल्लंघन की स्थिति में रिट जारी करने की शक्ति। |
- अनुच्छेद 226 – उच्च न्यायालय को भी रिट जारी करने की शक्ति है। |
- अनुच्छेद 141 – सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय सभी अदालतों पर बाध्यकारी हैं। |

◆ न्यायिक पुनरावलोकन के प्रकार:

प्रकार	विवरण
विधायी पुनरावलोकन (Legislative Review)	संसद/विधानसभा द्वारा बनाए गए कानूनों की वैधता की समीक्षा।
कार्यकारी पुनरावलोकन (Executive Review)	कार्यपालिका द्वारा लिए गए निर्णय, आदेश, अधिसूचना की संवैधानिकता की समीक्षा
संवैधानिक संशोधनों की समीक्षा	संसद द्वारा किए गए संशोधनों का परीक्षण, क्या वे संविधान की "मूल संरचना" का उल्लंघन करते हैं?

◆ महत्वपूर्ण निर्णय (प्रकरण) जिन्होंने न्यायिक पुनरावलोकन की दिशा तय की

1. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)–

न्यायपालिका ने कहा कि संसद को संविधान संशोधित करने का अधिकार है, लेकिन वह संविधान की मूल संरचना (Basic Structure) को नहीं बदल सकती।

न्यायिक पुनरावलोकन को संविधान की मूल संरचना में शामिल किया गया।

2. गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य (1967)–

सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि संसद मौलिक अधिकारों को समाप्त नहीं कर सकती।

3. मेनका गांधी बनाम भारत सरकार (1978)–

न्यायालय ने "Due Process of Law" को अपनाया और अनुच्छेद 21 की व्यापक व्याख्या की।

पुनरावलोकन के अधिकार को और मजबूत किया।

4. इंदिरा गांधी बनाम राजनारायण (1975)–

चुनाव से संबंधित 39वें संशोधन को असंवैधानिक ठहराया गया।

यह निर्णय न्यायपालिका की स्वतंत्रता और पुनरावलोकन की शक्ति को दर्शाता है।

◆ न्यायिक पुनरावलोकन का महत्व

कारण

व्याख्या

1. संविधान की सर्वोच्चता की रक्षा। कोई भी संस्था संविधान से ऊपर नहीं है – न्यायिक पुनरावलोकन इसका प्रहरी है।
2. लोकतंत्र की रक्षा विधायिका या कार्यपालिका की मनमानी को नियंत्रित करता है। 3.
मौलिक अधिकारों की सुरक्षा यदि किसी कानून या आदेश से नागरिक के अधिकारों का हनन होता है, तो उसे रोका जा सकता है। |
4. शक्ति का संतुलन बनाए रखना शासन के तीनों अंगों में संतुलन और नियंत्रण स्थापित करता है। 5.
राजनीतिक दुरुपयोग से सुरक्षा सत्तारूढ़ दलों की निरंकुशता को रोका जा सकता है।

◆ भारत में न्यायिक पुनरावलोकन की सीमाएँ

हालाँकि न्यायिक पुनरावलोकन एक आवश्यक उपकरण है, लेकिन इसके कुछ सीमाएं और चुनौतियाँ भी हैं:

1. न्यायिक अतिक्रमण (Judicial Overreach):

कभी-कभी न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर ऐसे निर्णय लेने लगता है जो नीति निर्धारण के क्षेत्र में आते हैं।

2. जन प्रतिनिधित्व का हनन:

संसद जन प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होती है। न्यायपालिका द्वारा संसद के कानूनों को रद्द करना "लोक इच्छा" का अपमान समझा जा सकता है।

3. स्पष्ट मानक का अभाव:

न्यायिक पुनरावलोकन के लिए स्पष्ट और एकरूप मानकों का अभाव होता है, जिससे भिन्न-भिन्न न्यायालय अलग-अलग निर्णय दे सकते हैं।

4. विलंबित न्याय प्रक्रिया:

भारत में न्यायिक प्रणाली पहले से ही मुकदमों से बोझिल है, पुनरावलोकन प्रक्रिया इसे और लंबा बना सकती है।

◆ न्यायिक पुनरावलोकन बनाम न्यायिक सक्रियता

तत्व	न्यायिक पुनरावलोकन	न्यायिक सक्रियता
परिभाषा	कानूनों या आदेशों की संवैधानिक समीक्षा	सामाजिक-राजनीतिक मुद्दों पर सक्रिय न्यायालय हस्तक्षेप
आधार	संविधान	न्यायिक विवेक, PIL आदि
उद्देश्य	संविधान की रक्षा	जनहित संरक्षण, शासन की जवाबदेही
नियंत्रण	सीमित, केवल असंवैधानिक कार्यों की समीक्षा	कई बार नीति निर्माण में भी हस्तक्षेप

◆ न्यायिक पुनरावलोकन और संविधान की मूल संरचना सिद्धांत—

मूल संरचना सिद्धांत न्यायिक पुनरावलोकन की नींव है।

न्यायालय संसद के किसी भी संशोधन को असंवैधानिक ठहरा सकता है, यदि वह संविधान की मूल संरचना (जैसे —

न्यायपालिका की स्वतंत्रता, धर्मनिरपेक्षता, विधि का शासन) का उल्लंघन करता है।

इस सिद्धांत ने न्यायपालिका को सच्चे अर्थों में "संविधान का रक्षक" बनाया।

◆ निष्कर्ष

न्यायिक पुनरावलोकन भारतीय लोकतंत्र की आत्मा है। यह विधायिका और कार्यपालिका के कार्यों की निगरानी करता है और उन्हें संविधान के अनुरूप बनाए रखता है। यह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा करता है और सत्ता के मनमाने प्रयोग पर नियंत्रण स्थापित करता है।

हालाँकि, न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का उपयोग विवेकपूर्ण, सीमित और संतुलित ढंग से किया जाना चाहिए ताकि लोकतंत्र की तीनों शाखाओं के बीच संतुलन बना रहे। इसके बिना, न्यायपालिका का अतिक्रमण (Overreach) नई समस्याओं को जन्म दे सकता है।

इसलिए, न्यायिक पुनरावलोकन न तो सर्वोच्च सत्ता है, न ही निरीह शक्ति – बल्कि यह संवैधानिक संतुलन और न्याय की गारंटी है।

★★-----★★

Important Questions (2024-25)

M.A- Political Science

Semester - 4

Paper- Comparative Politics & Political Analysis -II

Unit-I

1. राजनीतिक संस्कृति को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रकार एवं विशेषताएं बताइए।
2. राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा का समालोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
3. राजनीतिक विकास तथा राजनीतिक आधुनिकीकरण पर टिप्पणी लिखिए।

Unit-II

4. आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक दलों की भूमिका का परीक्षण कीजिए।
5. दबाव समूह को परिभाषित कीजिए। आधुनिक प्रजातांत्रिक राज्यों में दबाव समूह की भूमिका का विवेचन कीजिए।
6. राजनीतिक प्रक्रिया में प्रतिनिधित्व की विभिन्न विधियों की विवेचना कीजिए।

Unit-III

7. राजनीतिक अभिजन सिद्धांत पर निबंध लिखिए।
8. नौकरशाही की परिभाषा दीजिए इसके प्रकारों तथा भूमिका की विवेचना कीजिए।
9. विधि (कानून) के शासन की अवधारणा की विवेचना कीजिए।

Unit-IV

10. शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
11. न्यायिक पुनरावलोकन पर लेख लिखें।

Unit-V

12. अति लघु प्रश्न—

- | | |
|----------------------------|----------------------|
| (i) राजनीतिक संचार | (vi) क्रांति |
| (ii) नौकरशाही के दो प्रकार | (vii) राजनीतिक विकास |
| (iii) राजनीतिक अभिजन | (viii) दबाव समूह |
| (iv) एक दलीय प्रणाली | (ix) शक्ति पृथक्करण |
| (v) कानून का शासन | (x) समावेशी व्यवस्था |